श्रीमद्भगवद्गीता



पुनीत बिसारिया

निम्नलिखित श्रीमद्भगवद्गीता जो आप पढ़ने वाले हैं वो मेरे गुरुदेव साहब " श्री पुनीत बिसारिया जी " ने लगभग 200 से ज्यादा बार पढ़कर उसे संक्षिप्त रूप में समझाया है ये नोटेस् मैंने (उपेंद्र त्रिपाठी) अपने स्वाध्याय के लिए बनाए थे आशा करता हूँ कि ये जिस प्रकार ये मेरे लिए उपयोगी हैं उसी प्रकार आप सभी के लिए भी उपयोगी सिद्ध होंगे

इसके लेखन में यदि कोई भी त्रुटि होगी तो उसके लिए मैं क्षमाप्रार्थी हूँ .....

__उपेंद्र त्रिपाठी

Upendra Tripathi



Chapter - 1

अर्जुन विषाद योग

इस अध्याय को गीता की भूमिका भी माना जाता है।

धृतराष्ट्र संजय से : संजय इस समय युद्ध क्षेत्र में क्या चल रहा है?

(संजय धृतराष्ट्र के सारथी थे और व्यास जी ने इन्हें दिव्यदृष्टि प्रदान करी थी।)

दुर्योधन द्रोणाचार्य से : महाराज द्रुपद के पुत्र धृष्टद्युम्न ने कितनी बढ़िया व्यूह रचना करी है। (तंज़)

नोट : द्रोणाचार्य और द्रुपद में विवाद हो गया था और दोनों ने एक दूसरे का बहुत अपमान किया था। इसी अपमान के बाद द्रुपद ने एक यज्ञ किया और उन्हें दो संतानों की प्राप्ति हुई। द्रौपदी और धृष्टद्युम्न।
यज्ञ ऐसे पुत्र की प्राप्ति के लिए किया ही गया था जो गुरु द्रोण का वध कर सके और द्रोणाचार्य को भी यह बात अच्छी तरह से पता थी फिर भी उन्होंने धृष्टद्युम्न को शिक्षा दी।

इसी वजह से दुर्योधन द्रोणाचार्य पर तंज कस रहा है।

दुर्योधन द्रोणाचार्य से : किसी भी प्रकार से भीष्म पितामह को कुछ भी नहीं होना चाहिए आप उनकी रक्षा करिए।

वजह : भीष्म पितामह ने यह शपथ ले रखी थी कि कभी भी वह स्त्री और नपुंसक पर शस्त्र नहीं उठाएँगे और पांडवों की तरफ से शिखंडी लड़ रही थी। यही दुर्योधन के चिंता की वजह थी।

(शिखंडी या शिखंडिनी कुछ किताबों में इन्हें महिला बताया गया है कुछ में इन्हें किन्नर बताया गया है)

सबसे पहले शंख भीष्म पितामह ने बजाया उसके बाद श्री कृष्ण ने।

(शंखनाद खत्म होने के बाद)

अर्जुन कृष्ण से : हे केशव मेरा रथ दोनों पक्ष की सेनाओं के बीच में खड़ा करिए मैं देखना चाहता हूँ कि दोनों तरफ से कौन-कौन से योद्धा युद्ध में भाग ले रहे हैं।

(अर्जुन ने जब दोनों पक्षों को देखा तो वह मन में सोचता है कि जिनसे मैं युद्ध करने जा रहा हूँ वे सभी तो मेरे सगे-संबंधी हैं।)

अर्जुन : हे केशव मेरे हाथ काँप रहे हैं, मुख सूख रहा है और चमड़ी जल रही है, हाथ से गांडीव छूट रहा है मैं सही से खड़ा भी नहीं हो पा रहा हूँ।

जो राज्य अपने प्रिय जनों को मारकर प्राप्त हो ऐसा राज्य तो छोड़ दीजिए मैं ऐसा स्वर्ग भी ठुकरा दूँगा। हे केशव मैं इनको मारूँ इससे अच्छा यही मुझे मार डालें।

इतना कह के अर्जुन अपने रथ के पिछले हिस्से में बैठ जाता है।

इस पूरे अध्याय में श्री कृष्ण (दुनिया के सर्वश्रेष्ठ मनोवैज्ञानिक) केवल सुनते हैं और एक भी शब्द नहीं बोलते।

Chapter - 2
सांख्ययोग

(Time 07:12)

सांख्ययोग को ज्ञानयोग भी कहा जाता है।

Key Points :-

- **आत्मा की अमरता ?**
- **धर्म और कर्तव्य ?**
- **मूल स्वभाव के अनुसार व्यक्ति का धर्म और कर्तव्य ?**
- **कर्मयोग ?**
- **स्थितप्रज्ञ या स्थिरबुद्धि वाले व्यक्ति के लक्षण ?**

अर्जुन की पूरी बात सुनने के बाद श्री कृष्ण दूसरे श्लोक से बोलना शुरू करते हैं।

श्री कृष्ण : हे पार्थ इस विषम अवसर पर तुम्हें यह अज्ञान कहाँ से प्राप्त हो रहा है।

(विषम अवसर : अब दोनों तरफ सेनाएँ आकर खड़ी हो चुकी हैं युद्ध का शंखनाद भी हो चुका है और अर्जुन कह रहा है कि अपने सगे संबंधियों से युद्ध नहीं करेगा।)

जब दुर्योधन ने कहा था कि तुम्हें सुई की नोक के बराबर भी जमीन नहीं देगा। अगर तब तुमने युद्ध के लिए मना कर दिया होता और कह देते कि हम प्रजा की तरह रह लेंगे। तब तो यह चीज़ त्याग की श्रेणी में आ जाती किंतु अब यदि तुम युद्ध नहीं करोगे तो पूरी दुनिया तुम्हें नपुंसक और कायर कहेगी।

अर्जुन : हे केशव भूमि के एक छोटे से टुकड़े के लिए अपने सगे संबंधियों को मारना कहाँ तक उचित है ?

हे केशव अभी तक आपने जितने लोगों को मारा है वह सभी दुष्ट थे किंतु सामने खड़े व्यक्ति मेरे सगे संबंधी है और इनको मारने के बजाय मैं भीख माँगकर गुजारा करना ज्यादा सही समझता हूँ। इनको मारने के बाद मैं खुद भी जिंदा नहीं रहना चाहूँगा और आप कहते हैं कि इनसे युद्ध करो।

हे केशव मैं कुछ भी नहीं समझ पा रहा हूँ आप मुझे समझाइए कि मेरा धर्म क्या है ?

मेरे लिए क्या करना उचित है ? मैं वही करुँगा।

(अर्जुन ने यह कह तो दिया पर वह दृढ़ निश्चय कर चुका है कि युद्ध नहीं करेगा)

यहीं से गीता का ज्ञान शुरू होता है।

श्री कृष्ण : अर्जुन तू विद्वानों जैसी बातें कर रहा है किंतु असल में तू विद्वान नहीं है। क्योंकि विद्वान ना जीवित का शोक करते हैं और ना मरे हुए का क्योंकि वे यथार्थ जानते हैं।

विद्वान या पंडित : ऐसा व्यक्ति जिसने शास्त्रों का मर्म समझ लिया है, जिसका विवेक जागृत हो चुका है तथा जिसकी बुद्धि उचित और अनुचित में फ़र्क कर सकती है।

श्री कृष्ण : जिन्हें तू भीष्म पितामह और द्रोणाचार्य समझ रहा है ये सब केवल देह के बंधन से बंधी हुई आत्माएँ हैं। ये वह

देह नहीं है जिन्हें तू अपना रिश्तेदार या सगासंबंधी समझ रहा है।

श्री कृष्ण : मुख्य चीज़ है “ आत्मा ” शरीर नहीं।

आत्मा अमर है और शरीर नश्वर है आत्मा को कोई नष्ट नहीं कर सकता और शरीर को कोई बचा नहीं सकता। क्योंकि आत्मा ना ही जन्म लेती है और ना ही उसकी मृत्यु होती है।

जिस तरह मनुष्य पुराने वस्त्र छोड़कर नए वस्त्र धारण कर लेता है उसी प्रकार आत्मा “ जीर्ण शरीर ” को छोड़कर नए शरीर को धारण कर लेती है।

जीर्ण शरीर : वृद्ध शरीर, ऐसा शरीर जिसने अपने कर्मों का फल भोग लिया है।

ऐसे शरीर में आत्मा के रहने की कोई आवश्यकता नहीं होती इसीलिए आत्मा ऐसे शरीर को छोड़ देती है। अर्थात् जब तक व्यक्ति अपने कर्मों का फल भोग नहीं लेता तब तक उनकी मृत्यु नहीं हो सकती।

हे पार्थ तुम जिन लोगों को मार रहे हो वह इसलिए मर रहे हैं क्योंकि वह सभी अपने कर्मों का फल भोग चुके हैं। इसीलिए तुम मोह मत करो सिर्फ युद्ध करो क्योंकि तुम्हारा धर्म है युद्ध करना।

जो अपने धर्म का पालन नहीं करता उसका बड़ा अपयश और बदनामी होती है। और यह अपयश, बदनामी या अपकीर्ति मृत्यु से भी बदतर है। अगर तुम युद्ध नहीं करोगे तो जो लोग आज तुम्हें वीर समझते हैं वह तुम्हें कायर कहेंगे और पीढ़ी दर पीढ़ी तुम्हारा अपयश बढ़ता चला जाएगा। इसके विपरीत यदि तुम युद्ध जीत जाते हो तब तो राज्य करोगे और अगर वीरगति को प्राप्त हो जाते हो तो स्वर्ग की प्राप्ति होगी।

इसीलिए सुख-दुःख, लाभ-हानि, जय-पराजय सबको एक जैसा समझ लो और युद्ध के लिए तत्पर हो जाओ।

✓ धर्म से अर्थ है " कर्तव्य " अर्थात् नियमों का पालन करना।

जो भी एक व्यक्ति का कार्य है वही उसका धर्म है।

जैसे छात्र का कार्य पढ़ाई करना है। जो कार्य है वही कर्तव्य है और जो कर्तव्य है वही धर्म है। यानी छात्र का छात्र धर्म पढ़ाई करना है।

धर्म ही कर्तव्य है कर्तव्य ही धर्म है इसीलिए व्यक्ति को अपने धर्म का पालन करना चाहिए। धर्म का पालन यानी कर्तव्य का पालन करना चाहिए।

कर्तव्य जो किसी व्यक्ति के Specific कार्य हैं। और व्यक्ति जब भी इस कार्य को करे तब कामना को त्याग कर सफलता और असफलता को एक समान मानकर कार्य करना चाहिए। क्योंकि

✓ कामना के साथ किसी कर्म को करना नीचकर्म है। किंतु यदि आप कोई कार्य / कर्म बिना कामना (expection) के कर रहे हैं तो वह कार्य यज्ञ बन जाता है।

यज्ञ : जो कुछ भी काम करना उसे भगवान् को समर्पित कर देने के भाव से करना।

हे प्रभु यह मेरा इनपुट था मै आपको समर्पित करता हूँ आपको जैसा लगे वैसा आउटपुट दे देना।

इसी तरह से कर्म करने को “ कर्मयोग ” कहा जाता है और इस तरह से कर्म करने वाले को “ कर्मयोगी ” कहा जाता है।

कर्मयोगी कभी भी किसी भी प्रकार की अपेक्षा नहीं रखता इसलिए उसकी उम्मीद कभी नहीं टूटती इसी वजह से उसका मन शांत हो जाता है और जिसका मन शांत हो जाता है उसको मानसिक शांति या सुकून प्राप्त हो जाता है। उसकी बुद्धि स्थिर हो जाती है।

इस श्लोक में संपूर्ण गीता का सार छुपा हुआ है।

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।
मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि॥

अर्थ : कर्म पर ही तुम्हारा अधिकार है, कर्म के फलों में कभी नहीं... इसलिए फल पाने की इच्छा से कर्म मत करो।

इस श्लोक के अंदर चार चीज़े हैं

1. कर्म : तेरे हाथ में है

2. कर्मफल : किसी अन्य शक्ति के हाथ में है

3. कर्मफल की आशा : तू कर्म करते समय फल प्राप्ति की आशा मत कर

4. कर्मफल का त्याग : कर्मफल छोड़ने का अर्थ यह नहीं है कि तू कर्म करना ही छोड़ दे।

उदा. एक लड़का है जो IAS एग्जाम की तैयारी कर रहा है

1. कर्म करना तुम्हारे हाथ में है

अर्थात् अगर आप IAS तैयारी कर रहे हो तो फिर आप उसके अलावा कुछ भी नहीं कर सकते। आप सिर्फ़ मेहनत ही कर सकते हो इसके अलावा आपके हाथ में कुछ भी नहीं है।

2. कर्मफल किसी अन्य शक्ति के हाथ में है

प्रश्नपत्र कोई दूसरा बनाएगा और उत्तर पुस्तिका कोई दूसरा चेक करेगा और इसके बाद दो राउंड और होंगे।

मतलब तुम्हारे कर्म का फल देने की शक्ति किसी दूसरे के हाथ में है।

3. तू कर्म करते समय फल प्राप्ति की आशा मत कर

मान लेते हैं यह इस लड़के का चौथा attempt था और इसने बहुत ही अच्छी तरीके से तैयारी करी थी पर यह भी तो हो सकता है कि किसी दूसरे लड़के ने इससे भी अच्छी तैयारी कर रखी हो। यानी कि जिसकी तैयारी ज्यादा अच्छी होगी उसी का selection होगा।

इसीलिए तुम फल प्राप्ति की इच्छा मत करो क्योंकि हो सकता है तुम्हें बहुत ही ज्यादा निराशा मिले।

4. फल प्राप्ति की आशा नहीं रखने का अर्थ यह नहीं है कि तू कर्म करना ही छोड़ दे।

एक से एक धुरंधर एग्जाम में बैठेंगे जिन्होंने अपने सब्जेक्ट को पानी की तरह पी लिया होगा। उनसे आगे बढ़ने के लिए तुम्हें बहुत ही ज्यादा मेहनत और अलग-अलग तरीकों का इस्तेमाल करना पड़ेगा।

IAS का exam बहुत कठिन होता है तो इसका मतलब यह नहीं कि आप उसकी तैयारी ही नहीं करोगे।

Chapter - 3

कर्मयोग

(Time 20:40)

Key Points :-

- कर्मयोग : फल की इच्छा किए बिना लगातार कर्म करते जाना। फल की इच्छा तो बिल्कुल भी नहीं करना है।

- अपने मूल स्वभाव को समझकर अपने धर्म का चुनाव करना चाहिए।

अर्जुन : हे केशव एक तरफ तो आप मानसिक शांति और बुद्धि को स्थिर रखने की बात करते हैं और दूसरी तरफ मुझे युद्ध जैसे भयंकर कर्म को करने के लिए कह रहे हैं। इसी वजह से मेरे मन में दुविधा उत्पन्न हो रही है अब आप ही बताइए मुझे क्या करना चाहिए ?

श्री कृष्ण : इस युग में दो प्रकार की आस्थाएँ हैं

1. ज्ञानयोग : ज्ञान प्राप्ति की इच्छा रखना लेकिन कर्म नहीं करना।

2. कर्मयोग : निष्काम भावना से कर्म करते चले जाना और फल की इच्छा नहीं रखना।

अगर कोई व्यक्ति ऐसा है जो सिर्फ ज्ञान ही प्राप्त करने की कोशिश करता है किंतु कर्म नहीं करता, तो उसके ज्ञान का कोई मतलब नहीं रह जाता। क्योंकि उसके ज्ञान को Practical Application तो मिल ही नहीं रही है।

अगर आप अपने प्राप्त किए हुए ज्ञान का उपयोग ही नहीं कर पा रहे हो तो क्या मतलब है आपके ज्ञानार्जन का।

इसके विपरीत दूसरा व्यक्ति है जो सिर्फ कर्म करने में यकींन करता है लेकिन ज्ञान प्राप्ति की इच्छा उसमें है ही नहीं।

आपके पास ज्ञान है किंतु कर्म नहीं है तब तो कोई मतलब ही नहीं है। लेकिन यदि आपके पास कर्म है किंतु ज्ञान नहीं है तो भले देर से ही सही, परिणाम जरूर मिलेगा। इसीलिए भगवान कृष्ण कर्मयोग को ज्ञानयोग से श्रेष्ठ मानते हैं।

विचार करिए की कोई ऐसा व्यक्ति जो कर्म करते हुए ज्ञान प्राप्त करे या ज्ञान प्राप्त करते हुए कर्म करे तो उसकी productivity कितनी बेहतर हो जाएगी।

✓ **कर्म करते हुए ज्ञान प्राप्त करना चाहिए और ज्ञान प्राप्त करते हुए कर्म करना चाहिए।**

अर्जुन युद्ध नहीं करना चाहता है इसलिए वह ज्ञानयोग की तरफ जा रहा है किंतु श्री कृष्ण जानते हैं कि अर्जुन का मूल स्वभाव एक सैनिक का है तो भले ही वह अभी अपने सगे संबंधियों को देखकर युद्ध करने से इनकार कर रहा है किंतु थोड़े ही समय के बाद जैसे ही उसका मूल स्वभाव जागृत होगा वह युद्ध के लिए प्रवृत्त हो जाएगा।
और जो उसके अंदर वैराग्य की भावना जग रही है वह थोड़े समय बाद अपने आप ही खत्म हो जाएगी।

इसीलिए श्री कृष्ण कहते हैं कि अपने कर्तव्य का त्याग करके यदि तुम संन्यास ले लोगे तो लोग तुम्हें मूर्ख और ढोंगी कहेंगे। किंतु यदि तुम निष्काम भावना से अपने धर्म का पालन करोगे तो तुम महान व्यक्ति कहलाओगे हैं।

युद्ध सही है या सन्यास ?

तर्क : युद्ध में लाखों लोग मरते हैं इससे अच्छा है कि दो में से कोई एक संन्यास ले ले यह तो बड़ी अच्छी बात है।

सोचिए यदि कोई भारत का सैनिक दुश्मनों को मारने के लिए बॉर्डर पर गया और वह सोचने लग जाए कि इतने लोगों को क्यों मारूँ यह तो बुरी बात है इससे पाप होगा और उसने संयास ले लिया।
ऐसा सैनिक मूर्ख और ढोंगी कहलाएगा और हम उसे कायर और नपुंसक भी कहेंगे क्योंकि सैनिक का धर्म और कर्तव्य युद्ध करना है।

हे अर्जुन तुम व्यर्थ की बातें मत सोचो सीधा युद्ध करो क्योंकि पृथ्वी का सारा व्यापार आदान-प्रदान से चलता है और इस cycle में कहीं भी बाधा आ जाए तो श्रृष्टि का पूरा संतुलन बिगड़ जाता है।

व्यापार का अर्थ क्या है ?

अगर कोई किसान खेती करना बंद कर दे तो आपके पास चाहे कितने ही पैसे क्यों ना हो आप खाना नहीं खा पाएँगे। अगर किसान अपना काम करना छोड़ देंगे तो पृथ्वी के सभी लोग भूखे मर जाएँगे। अर्थात् पूरी सृष्टि का व्यापार बिगड़ जाएगा।

✓ हर व्यक्ति को उसका कर्म करते रहना अति आवश्यक है नहीं तो सृष्टि का संतुलन बिगड़ जाएगा।

श्री कृष्ण : हे पार्थ ऐसा व्यक्ति जो सृष्टिचक्र के अनुसार अर्थात् अपने धर्म के अनुसार अपने कर्तव्य का पालन नहीं करता उसका जीना व्यर्थ है।

भले ही तुम चाहे सबकुछ प्राप्त कर लो फिर भी तुम्हें कर्म करते रहना चाहिए।

राजा जनक का उदाहरण देते हुए श्री कृष्ण कहते हैं कि राजा जनक ने राजकाज को ही लोक सेवा का माध्यम बना लिया था वह राजा तो थे पर प्रजा पर राज करने के की बजाए प्रजा की सेवा करते थे केवल इसी वजह से उन्हें परम सिद्धि मिल गई थी।
ऐसा इसलिए हुआ क्योंकि राजा का मुख्य कार्य प्रजा की सेवा करना ही होता है।

✓ अगर कोई व्यक्ति अपना कार्य पूरी ईमानदारी के साथ करे तो उसको परमसिद्धि मिल जाएगी।

अगर कोई छात्र अपने विषय पर पूरी क्षमता और पूरे सामर्थ्य के साथ मेहनत कर रहा है तो वह अपने विषय का सिद्ध हो जाएगा।

अर्जुन तुम एक क्षत्रिय हो और क्षत्रिय का काम पापियों को मारना और लोगों की रक्षा करना होता है तुम पापियों को मार कर लोगों की रक्षा करने के लिए शस्त्र उठा रहे हो इसीलिए तुम यदि पापियों की हत्या भी करोगे तो भी तुम्हें पाप नहीं लगेगा। इसीलिए जो तुम्हारा कर्तव्य है उसका पालन करो।

श्री कृष्ण : हे पार्थ तीनों लोकों में कोई भी ऐसी चीज़ नहीं है जो मेरे पहुँच से दूर हो और मैं सभी कर्तव्यों से मुक्त भी हूँ फिर भी मैं लगातार कर्म करता हूँ क्योंकि यदि मैं सावधानीपूर्वक अपना कर्म नहीं करूँगा तो लोग मेरा अनुसरण करके कर्म करना छोड़ देंगे और इससे हर तरफ अव्यवस्था फैल जाएगी जिसका जिम्मेदार सिर्फ और सिर्फ मैं रहूँगा।

इसीलिए ज्ञानियों का यह कर्तव्य होता है कि सभी प्रकार के कर्तव्यों से मुक्त होने के बाद भी लोगों के समक्ष एक सही उदाहरण पेश करने के लिए उन्हें लगातार सही कर्म करते रहना चाहिए।

हे पार्थ अगर मेरे इतना कहने पर भी तुम्हें समझ नहीं आ रहा है तो तुम भक्तियोग का आश्रय लो और अपने सारे कर्म मुझे समर्पित कर दो और सारे पाप पुण्य मुझ पर छोड़ दो।

अर्जुन तुम्हारी मूल प्रकृति एक सैनिक की है इसलिए अपने मूल स्वभाव को दबाने का प्रयास मत करो क्योंकि तुम्हारा मूल स्वभाव ही तुम्हारा धर्म निर्धारित करता है।

अपने कर्तव्य का पालन करते हुए अगर तुम्हारी मृत्यु भी हो जाती है तो भी तुम्हें स्वर्ग ही मिलेगा इसीलिए हे अर्जुन निष्काम भावना से अपने कर्तव्यों का पालन करो।

Chapter - 4

ज्ञानयोग

(Time 30:20)

बिना कर्म के ज्ञान व्यर्थ है और बिना ज्ञान के कर्म व्यर्थ है इसीलिए ज्ञान प्राप्त करते-करते कर्म करते रहना चाहिए और कर्म करते-करते ज्ञान प्राप्त करते रहना चाहिए। क्योंकि कोरा कर्म और कोरा ज्ञान दोनों ही अधूरे होते हैं।
(Chapter 3)

Key Points :-

- **ज्ञान, कर्म और सन्यास ?**
- **श्री कृष्ण के अवतार लेने का कारण ?**
- **वर्ण व्यवस्था ?**

श्री कृष्ण : हे अर्जुन कर्मयोग का रहस्य सबसे पहले मैंने सूर्य को बताया था फिर सूर्य से मनु को मिला और मनु के बाद यह बहुत समय तक लुप्त रहा।
वैसे तो कर्मयोग का रहस्य हर किसी को नहीं बताया जाता लेकिन तुम एक योग्य व्यक्ति हो इसलिए मैं तुमको यह समझा रहा हूँ।

श्री कृष्ण ने अर्जुन को ही कर्मयोग का रहस्य क्यों समझाया ?

वजह : ज्ञान योग्य और सुपात्र को ही दिया जाता है कुपात्र को नहीं क्योंकि मूर्ख व्यक्ति ज्ञान पाकर और भी ज्यादा मूर्ख हो जाता है।

अर्जुन : सूर्य तो बहुत पहले से हैं और आप तो बहुत बाद में पैदा हुए हो तो मैं यह कैसे मान लूँ कि आपने सूर्य को कर्मयोग का रहस्य समझाया था।

कृष्ण : अर्जुन मेरे और तुम्हारे कई जन्म हो चुके हैं जिन्हें मैं जानता हूँ किंतु तुम नहीं जानते

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत ।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम् ॥ 4.7॥

परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम् ।
धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे ॥ 4.8 ॥

जब जब धर्म की अवनति होती है और अधर्म बढ़ता है तब-तब मैं अवतार लेता हूँ।

दुष्टों के विनाश के लिए और साधुओं की रक्षा के लिए मैं युगों युगों में जन्म लेता हूँ इसीलिए मेरे कर्म हमेशा परहित के लिए होते हैं खुद के लिए या निजी लाभ-हानि के लिए नहीं।

जो व्यक्ति स्वयं में और मुझमें कोई अंतर नहीं देखता उसके सभी कर्म कर्मयोग में आ जाते हैं क्योंकि वह इच्छा और कामनाओं से ऊपर उठ चुका होता है। और जो व्यक्ति इस तरह से कर्म करता है उसे मोक्ष की प्राप्ति हो जाती है।

कर्म मुख्य चीज़ नहीं है " कर्म के पीछे की भावना " मुख्य चीज़ है। जो व्यक्ति जिस भावना के साथ मेरी शरण में आता है मैं उसे उसी भाव के अनुसार स्वीकार कर लेता हूँ।

आगे श्री कृष्ण वर्ण व्यवस्था के निर्माण के विषय में समझते हैं।

गुण और कर्म के आधार पर वर्ण व्यवस्था कैसे बनाई गई ?

श्री कृष्ण : गुण और कर्म के आधार पर मैंने 4 वर्ण बनायें हैं और हर व्यक्ति को उसके मूल स्वभाव के अनुसार कर्म चुनने की आज़ादी दी है।

प्राचीन समय में लोगों की बुद्धि परीक्षा की जाती थी और उसके अनुसार लोगों को उनका कार्यक्षेत्र चुनने दिया जाता था जिससे वो अपने max. Potential को achieve कर सकें और समाज को फ़ायदा पहुँचा सके।

यदि व्यक्ति अपने कर्म का चुनाव अपनी इच्छा और योग्यता अनुसार करे तो वह समाज को बहुत फ़ायदा पहुँचा सकता है।

गुण और कर्म के आधार पर चार वर्ण बनाये गए

1. ब्राह्मण : ज्ञान
2. क्षत्रिय : रक्षा
3. वैश्य : व्यापार
4. शूद्र : श्रम और सेवा

व्यक्ति को कार्य उनकी योग्यता के अनुसार दिया जाता था इसीलिए ऊँच-नीच की कोई बात ही नहीं थी। भगवान् कृष्ण ने गुण और कर्म के आधार पर वर्ण रचना की थी जन्म के आधार पर नहीं किंतु महाभारत के समय से इसमें बुराइयाँ आना शुरू हो चुकी थी।

भगवान् के अवतार लेने का कारण ?

श्री कृष्ण : मुझे कर्मफल की इच्छा नहीं है इसलिए मेरे कर्म मुझे लिप्त नहीं करते।

जैसे एक बालक बचपन में कोई भी काम करता है तो वह उसे खेल की तरह करता है उसे परिणाम की परवाह नहीं होती उसके लिए वह काम खेल ही होता है। किंतु जब किसी खेल में हार या जीत की भावना आ जाती है तो खेल खेल नहीं रह जाता उसमें परिणाम मुख्य चीज़ हो जाती है तब परिणाम उसे अपने बंधन में बाँधने लगते हैं।
जैसे ही आप खेल प्रतियोगिता की तरह खेलने लगते हो तब जीत की इच्छा पैदा होती है और आप जीत में खुश और हार में दु:खी होते हो।

भगवान् कृष्ण के सारे कर्म एक खेल की तरह होते हैं इसीलिए उन्हें कृष्णलीला कहा जाता है और श्री कृष्ण को लीलाधर।

श्री कृष्ण : जो भी मेरी इस वास्तविकता को जान लेता है वह कर्मबंधन में नहीं फँसता और कर्म से होने वाले सभी दु:खों से छुटकारा पा लेता है तथा उसे मोक्ष मिल जाता है।

जानने का अर्थ है : जो जान गए उसे अपने व्यवहार में उतार लेना। (तत्त्वज्ञानम् कार्यमेव प्रकाशयति।)

मोक्ष पा लेने की इच्छा का अर्थ यह नहीं है कि आप कर्म करना ही छोड़ दो क्योंकि मोक्ष के मार्ग में कर्म बाधक नहीं है कर्मफल की इच्छा बाधक है इसीलिए यदि छोड़ना है तो कर्मफल की इच्छा छोड़ो कर्म नहीं।

जिसने कर्मफल की कामना छोड़ दी है, जिसका सुख किसी व्यक्ति या वस्तु पर निर्भर नहीं है वह व्यक्ति सदा तृप्ति अनुभव करता है और उसको मोक्ष वैसे ही मिल जाता है। जिसे अपने सुख के लिए किसी दूसरे व्यक्ति या वस्तु पर निर्भर रहना पड़ता है उसे कोई भी तृप्त नहीं कर सकता। जैसे-जैसे उसकी इच्छाएँ पूरी होती जायेंगीं नई-नई इच्छाएँ पैदा होती जाएँगी। और वह कभी भी तृप्त नहीं हो पायेगा।

जो व्यक्ति किसी से भी किसी भी प्रकार की आशा नहीं रखता, जिसने सभी प्रकार के पदार्थ को संग्रह करने की वृत्ति त्याग दी है और खुद को जीवित रखने के लिए शरीर को कर्म में लगाए रखता है ऐसा व्यक्ति कभी भी पाप का भागीदार नहीं होता।

इसीलिए है अर्जुन कर्मयोग करते हुए अपने सभी संदेहों को ज्ञान से दूर करो तो तुम कर्मबंधन से मुक्त हो जाओगे और यदि तुम कर्म बंधन से मुक्त हो गए तो मोक्ष मिलेगा ही मिलेगा।

इसीलिए हे अर्जुन अपना गांडीव उठाओ और अपना कर्तव्य पालन करो।

Chapter - 5

कर्मसन्यास योग

(Time 40:40)

कर्मसन्यासयोग का अलग-अलग किताबों में अलग-अलग अर्थ दिया गया है।
जैसे एक किताब में दिया गया है " कर्म से संन्यास " अर्थात् अपने कर्मों को त्याग दो। किंतु यह तो गीता की मूल भावना के ही विपरीत है।

कर्मसन्यास का सटीक अर्थ है " कर्म के फलों का त्याग ना कि कर्म का। "

पिछले अध्याय के आखिरी श्लोक में श्री कृष्ण अर्जुन से कहते हैं कि तुम समस्त संशयों का त्याग करो और अपना कर्तव्यपालन अर्थात् युद्ध करो।

(यदि अर्जुन युद्ध करना शुरू कर देता तो गीता वहीं पर खत्म हो जाती किंतु अर्जुन का संशय अभी भी मिटा नहीं है इसीलिए वह आगे सवाल करता है)

अर्जुन : आप कर्मयोग की भी प्रशंसा करते हो और सन्यास की भी तो आप मुझे वो बताइए जो निश्चित रूप से मेरे लिए कल्याणकारी है।

श्री कृष्ण : सन्यास और कर्मयोग दोनों ही बेहतरीन चीज़े हैं पर सन्यास की तुलना में कर्मयोग ज्यादा बेहतर है।

सन्यास : राग, द्वेष, काम, क्रोध, लोभ, मोह तथा सभी प्रकार की आकांक्षाओं से मुक्त हो जाना, किसी से भी किसी भी प्रकार की कोई भी उम्मीद नहीं करना।
सन्यास का अर्थ यह नहीं है कि आप अपनी संपत्ति, धन-दौलत, जर-जमीन सब कुछ छोड़कर जंगल चले जाओ।

जिसका अंतःकरण शुद्ध है, जिसने अपनी इंद्रियों को जीत लिया है, जो दूसरे प्राणियों की आत्मा को अपनी आत्मा के समान मानता है वह किसी दूसरे को कष्ट दे ही नहीं सकता। ऐसे व्यक्ति के लिए ऊँचे से ऊँचा और नीच से नीच व्यक्ति एक समान हो जाता है। ऐसे ज्ञानी व्यक्ति के लिए गाय, हाथी, कुत्ता और चांडाल एक जैसे ही हैं।

यानी ज्ञानी व्यक्ति के लिए सभी एक समान ही हो जाते हैं। वह किसी को भी नीचा मानकर उससे घृणा नहीं करता और किसी को ऊँचा मानकर उससे प्रेम नहीं करता। वह

सभी को भगवान् की ही रचना मानकर समान भाव से स्वीकार कर लेता है।

ऐसे व्यक्ति के लिए सुख और दुःख एक समान है उसे किसी भी चीज़ का मोह नहीं रहता तथा उसकी बुद्धि स्थिर हो जाती है और वह स्थायी शांति प्राप्त करता है। तथा उसे मोक्ष प्राप्त हो जाता है ऐसा इसलिए क्योंकि वह किसी भी चीज़ की इच्छा नहीं कर रहा है।

हे अर्जुन जो अपने सभी कर्मों को भगवान को समर्पित कर देता है ऐसे व्यक्ति को मोक्ष की प्राप्ति हो जाती है।

Chapter - 6

ध्यानयोग

(Time 44:30)

Most Important Chapter for Students

Key Points :-

- **ध्यान क्यों और किस तरह से लगाना चाहिए ?**

हमारा मन भटकता रहता है अर्थात् हमारा ध्यान इधर-उधर भटकता रहता है और तरह-तरह की चीज़ें सोचता रहता है। ध्यान के भटकाव को रोकने के लिए हमें इसे एक चीज़ पर केंद्रित करना होता है वह चीज़ है "आत्म" (आत्म : स्वयं)

अर्थात् ध्यान के भटकाव को रोकने के लिए हमें पूरा का पूरा ध्यान स्वयं पर लगाना चाहिए।

(कुछ किताबों में आत्म को आत्मा माना गया है।)

जो व्यक्ति बिना कर्मफल की इच्छा के कर्म करता है वही व्यक्ति ज्ञानयोगी है, कर्मयोगी है, सन्यासी है।

किंतु यदि वह निष्काम भावना से इसलिए कर्म कर रहा है ताकि उसे मोक्ष मिल जाए तो फिर वह ज्ञानयोगी, कर्मयोगी और संन्यासी बिल्कुल भी नहीं है।
यानी कि फल की इच्छा के बिना कर्म करो तभी मोक्ष मिलेगा। किंतु यदि मोक्ष की इच्छा से कर्म करोगे तो वह कर्मयोग नहीं रह जायेगा।

मनुष्य खुद का ही सबसे बड़ा दोस्त और सबसे बड़ा दुश्मन होता है यदि वह चाहे तो खुद को बहुत आगे बढ़ा ले उसे कोई नहीं रोक सकता और यदि वह चाहे तो खुद को नष्ट भी कर डाले तो भी उसे कोई नहीं रोक सकता।
हमें कोई भी व्यक्ति आबाद या बर्बाद नहीं कर सकता हमारे खुद के कर्म ही हमें आबाद या बर्बाद करते हैं।

कर्म हम स्वयं के लिए करते हैं इसीलिए हम स्वयं ही अपने मित्र और शत्रु होते हैं।

अगर किसी व्यक्ति को यह आभास हो जाए कि अभी जो कुछ भी वह कर रहा है उससे उसको आगे चलकर नुकसान ही होगा तो वह अच्छे साहित्य पढ़कर, अच्छी संगति करके स्वयं को सुधार सकता है सोचिए यदि किसी को यह

आभास ही ना हो की वह ग़लत मार्ग पर है तो उसकी गति क्या होगी।

जीवन में परमआनंद वही प्राप्त करता है जो " आत्मजयी " होता है यानी जिसने खुद को जीत लिया है।

श्री कृष्ण के अनुसार परम आनंद तो मोक्ष है किंतु यदि कोई विद्यार्थी है तो उसके लिए परम आनंद उसकी लक्ष्य प्राप्ति है जिस चीज़ के लिए वह पढ़ रहा था अगर वह चीज़ उसे मिल गई तो उसके लिए परम आनंद है।

आत्मजयी व्यक्ति के लक्षण ?

जिसने अपने मन को जीत लिया है,
जिसे सर्दी-गर्मी, दुःख-सुख, मान-अपमान जैसी किसी भी चीज़ से फ़र्क़ नहीं पड़ता,
जिसके लिए मिट्टी, पत्थर और सोना एक जैसा है,
जो दोस्तों और दुश्मनों के लिए समान भाव रखता है,
जो ऊँचे से ऊँचे और नीच से नीच व्यक्ति के लिए समान भाव रखता है,

जो सभी उपयोगी अनुपयोगी व्यक्ति और वस्तुओं का
समान आदर करता है,
वह व्यक्ति आत्मजयी है।

जो व्यक्ति इस तरह की भावना कर लेता है उसे वही शांति प्राप्त होती है जो स्वयं मुझे (श्री कृष्ण को) प्राप्त है।

अर्जुन : इस तरह की शांति प्राप्त करने और आत्मजयी बनने के लिए क्या करना पड़ता है ?

श्रीकृष्ण : ध्यानयोग करना पड़ता है।

अर्जुन : ध्यानयोग किस तरह से करना चाहिए ?

योगी को एकांतवास करना चाहिए और सभी प्रकार की इच्छाओं को छोड़कर पूरा ध्यान स्वयं में लगाना चाहिए।

ध्यानयोग की विधि : व्यक्ति को अकेले किसी खाली जगह पर बैठना चाहिए। फिर अपनी रीड की हड्डी और सिर को सीधा रखते हुए अपनी आँखों को आधा खुला रखकर अपनी नाक की नोक को देखना चाहिए। Deep Breathing

करते हुए अपने मन को विचार मुक्त करने का प्रयास करना चाहिए।
ऐसा करने से आज्ञाचक्र जागृत हो जाता है। और जिसका आज्ञा चक्र जागृत हो जाता है वह संतुष्ट हो जाता है।

हे पार्थ मैंने तुम्हें विधि तो बता दी है किंतु मन को वश में करना अत्यंत कठिन कार्य होता है।

मन को वश में करने के दो तरीके होते हैं।

1. अभ्यास
2. वैराग्य

अभ्यास :

जब एक छोटा बच्चा चलना सीखता है तो वह बार - बार गिरता है फिर उठता है यही प्रक्रिया कई महीने तक चलती है और आखिरकार एक दिन वह चलना सीख ही जाता है।

वैसे ही मन है वह बार-बार भटकेगा लेकिन आपको फिर से स्वयं में लाकर अपने मन को टिका देना है। शुरुआत में आप

बार-बार गिरोगे किंतु कुछ समय के बाद आप इसके अभ्यस्त हो जाओगे।

वैराग्य :

जैसे ही एक इंसान को यह पता चल जाता है कि उसकी कामनाओं का कोई भी अंत नहीं है। आज एक पूरी हुई तो कल दूसरी खड़ी हो जाएगी और अगर दूसरी पूरी नहीं हुई तो दुःख उत्पन्न होगा। आदमी खत्म हो सकता है लेकिन उसकी इच्छाएँ नहीं।
जैसे ही एक इंसान को यह समझ आ जाता है की इच्छाओं का कोई अंत नहीं है और इच्छाएँ ना पूरी होने से दुःख उत्पन्न होता है तो वह समझ जाता है की इच्छाओं को खत्म करने से दुःख खत्म हो सकता है।

दुःख को खत्म करने का एक ही उपाय है
इच्छाओं को कम कर दिया जाए
जितना जरूरी है उतना ही कमाया जाए
और जरूरत की चीजें ही अपने पास रखा जाए

ऐसा करने से व्यक्ति का मन वश में हो जायेगा और उसका ध्यान स्वयं में अपने आप ही लगने लग जाएगा।

अर्जुन : हे केशव आप कहते हैं की मन को वश में करना बहुत ही कठिन है लेकिन ध्यानयोग के पालन से इसे वश में किया जा सकता है
किंतु यदि ध्यान की उच्चतम अवस्था में पहुँचने से पहले इस प्रक्रिया के दौरान ही मेरी मृत्यु हो जाती है तो क्या होगा, क्या मुझे मोक्ष मिल जाएगा ?

मैं तो मोक्ष प्राप्ति के लिए ही इतना सब कुछ कर रहा हूँ और अगर मरने के बाद मोक्ष ही नहीं मिला तो फिर क्या मतलब यह सब करने का। मैंने सुखों को भी नहीं भोगा और पूरा जीवन तप ही करता रह गया।

श्री कृष्ण : जो बहुत खाना खाता है
या की फिर भूँखा ही रहता है
जो जगता ही रहता है या सोता ही रहता है
ऐसे व्यक्ति का ध्यानयोग पूरा नहीं होता।

ध्यानयोग उसका सधता है जिसका

आहार विहार संतुलित है

जो सभी काम उतने ही करता है जितना की करना चाहिए।
जिसका सोना-जगना, खाना-पीना सब नियमित है।

तुम सब कुछ करो पर पूरा जोर संतुलन, संयम और उचित मात्रा पर दो तुम अपनी इंद्रियों को तरसाओ भी मत और उनका अति में उपयोग भी मत करो जितना जरूरी है केवल उतना ही करो।

मोक्ष वाली बात - जो व्यक्ति अच्छा कर्म करता है उसके कर्मों का कभी भी नाश नहीं होता। अच्छे रास्ते की तरफ बढ़ाया गया हर कदम आपको ऊँचा उठाता है।
मृत्यु दो जन्मों के बीच की नींद के समान है जो काम इस जन्म में नहीं हो पाता है वह काम दूसरे जन्म में होता है।

Observe : कुछ लोग बचपन से ही बहुत धार्मिक होते हैं, कुछ बहुत ही दुष्ट होते हैं, कुछ बहुत दयालु होते हैं यह सब पूर्व जन्मों के संस्कार होते हैं।

हर आत्मा को आखिरकार मुझ में ही आकर समा जाना है तो जैसे ही उनका चक्र पूरा होगा वह मुझमें आकर समा जाएँगे।

हे अर्जुन तू अपना पूरा ध्यान स्वयं पर लगा जिससे तेरा अंतर्तम मुझ में लीन हो सके।

Chapter - 7

ज्ञानविज्ञान योग

(Time 56:30)

हे अर्जुन तू पूरा मन मुझमें लगा और केवल मेरा ही आश्रय ले अर्थात् दुनिया में किसी भी व्यक्ति या वस्तु से किसी भी प्रकार की, कोई भी आशा मत कर क्योंकि तुझे कोई भी कुछ भी नहीं दे सकता।

दुनिया में दो तरह के विषय होते हैं

- **ज्ञान : अप्रत्यक्ष चीज़ों के विषय में जानना।**
- **विज्ञान : प्रत्यक्ष चीज़ों को जानना।**

हे अर्जुन मैं तुझे ज्ञान और विज्ञान के विषय में ऐसी बात बताऊँगा जिसको जानने के बाद कुछ और जानने को शेष नहीं बचता।

दुनिया में हजारों लाखों लोगों में से कोई एक मुझे जानने की कोशिश करता है और इस तरह के हजारों लाखों लोगों में से कोई एक मुझे जान पाता है।
अर्जुन जितनी भी चीज़ें है जो तुम्हें दिखाई देती हैं वह सब मेरी प्रकृति है जिसे मैने ही बनाया है और यह मेरा जड़ तत्व है और इन सब को चलाने वाली शक्ति मेरा चेतन तत्व है।

यह पूरा ब्रह्मांड भगवान् का शरीर है और जो शक्ति इसे चला रही है वह भगवान् की आत्मा है यानी चेतन तत्व।

पूरा ब्रह्मांड मुझसे ही उत्पन्न होता है और मुझे में आकर समाप्त हो जाता है। इस ब्रह्मांड में मेरे अलावा कुछ और है ही नहीं।

हजारों लाखों व्यक्तियों में कोई एक ही भगवान को क्यों जान पता है सभी क्यों नहीं ?

उदाहरण : कठपुतली के खेल में हमें कठपुतली तो दिखती है पर उसे चलाने वाला नहीं दिखता। क्योंकि वह पर्दे के पीछे रहता है अगर कोई बच्चा कठपुतली का खेल देख तो वह परेशान हो जाएगा कि आखिर यह कठपुतली चल कैसे रही है किंतु अगर वहीं कोई बड़ा व्यक्ति देखे तो वह समझ जाएगा कि इस कठपुतली को कौन चला रहा है।
(बच्चा : अज्ञानी, बड़ा : ज्ञानी)

हम इंसान तीन गुणो से बने होते हैं

1. **सतोगुण**

2. रजोगुण
3. तमोगुण

इन्हीं तीन गुणों की वजह से व्यक्ति मोह-माया में फँस जाता है। मोह-माया पर्दा है इसी पर्दे की वजह से हजारों लाखों लोग कठपुतली चलाने वाले को अर्थात् भगवान् को नहीं देख पाते।

ज्ञानी समझ जाता है कि इस संपूर्ण ब्रह्मांड को कौन चला रहा है और वह उसे समझने / जानने का प्रयास करता है ऐसे ही लाखों ज्ञानियों में से कोई एक भगवान् को जान पाता है और अज्ञानी तो मोह-माया से बाहर ही नहीं निकाल पाते।

इसीलिए है अर्जुन तू पूरा मन मुझमें लगा और मेरा आश्रय ले यही पूरे ज्ञान और विज्ञान योग का सार है।

Chapter - 8

अक्षरब्रह्म योग

(Time 01:01:20)

इस अध्याय में अर्जुन सात सवाल पूँछता है

1) ब्रह्म क्या है ?

जो कभी भी नष्ट नहीं होता। जो ना घटता है ना बढ़ता है सदैव एक जैसा रहता है।

2) अध्यात्म क्या है ?

किसी भी व्यक्ति के द्वारा स्वयं को जानने की कोशिश करना।

3) कर्म क्या है ?

पहले क्या होता था ? और बाद में क्या होगा ? इन दोनों भावनाओं को अलग करके वर्तमान में जो कर्तव्य है उसको करना।

4) अधीभूत क्या है ?

जितनी भी चीज़ें तू देखता है जो पैदा होती हैं और नष्ट हो जाती हैं

5) अधीदेव क्या है ?

जितनी भी चीज़ें तू देखता है उनका प्राण तत्व। अर्जुन मैं अधिदेव हूँ।

6) अधीयज्ञ क्या है ?

इस ब्रह्मांड में जितनी भी क्रियाएँ होती हैं वह सभी क्रियाएँ मैं करता हूँ और यज्ञ करने की भावना से करता हूँ इनसे मैं लाभ-हानि की अपेक्षा नहीं रखता हूँ इस भावना के साथ जो भी करता हूँ वो अधियज्ञ है।

7) मृत्यु के समय चित्त को कैसे स्थिर किया जाए ?

मरते वक्त जिस व्यक्ति की जैसी भावना होती है उसे वही भाव प्राप्त हो जाता है और अंतिम भावना वही होती है जो जीवन भर रहती है।

जिस व्यक्ति की जीवन भर बुरी भावना थी उसे बुरी योनि मिलेगी और जिसने अच्छे कर्म किये हों जिसकी जीवन भर अच्छी भावना रही होगी उसे अच्छी योनि मिलेगी।

मरते समय जो व्यक्ति मुझे स्मरण करता है वह मुझमें समाहित हो जाता है मेरे स्वरूप में मिल जाता है इसीलिए हे अर्जुन तू हर समय मेरा स्मरण करते हुए युद्ध कर अर्थात् अपना कर्तव्य पालन कर।

अलग-अलग व्यक्तियों के अलग-अलग धर्म होते हैं और उसी के अनुसार उनके अलग-अलग कर्तव्य होते हैं। जो तुम्हारा कर्म है वही तुम्हारा कर्तव्य है और वही तुम्हारा धर्म है तुम अपना कर्तव्य भी करो और मेरा स्मरण भी करो।

जो मनुष्य चित्त की स्थिरता के साथ पूरी एकाग्रता से लगातार अभ्यास करता है उसे लक्ष्य की प्राप्ति हो जाती है।

मानव योनि का अंतिम लक्ष्य है मोक्ष पाना।

इसीलिए जो भी व्यक्ति बिना अपना ध्यान भटकाये पूरी एकाग्रता के साथ स्वयं को जानने का अभ्यास करता है उसको मोक्ष मिल जाता है।

इसीलिए हे अर्जुन अपनी सभी इंद्रियों को उनके विषयों से हटाकर उनको स्वयं में एकाग्र करके " ॐ " अक्षर का उच्चारण करते हुए जो भी व्यक्ति देह त्याग करता है वह परमगति प्राप्त कर लेता है यही अक्षरब्रह्म योग का सार है।

Chapter - 9

राजविद्या राजगुह्य योग

(Time 01:07:00)

Key Points :-

- **राजविद्या**
- **राजगुह्य**
- **श्री कृष्ण को पाने का एकमात्र तरीका ?**

इस अध्याय में श्री कृष्ण अर्जुन को सर्वश्रेष्ठ विद्या और दुनिया के सर्वश्रेष्ठ रहस्य के विषय में बताया हैं।

राजविद्या : सर्वश्रेष्ठ विद्या
राजगुह्य : ऐसा रहस्य जिसे कोई नहीं जानता हो

श्री कृष्ण : मुझे पाने का एक ही तरीका है " श्रद्धा रखना "

अर्जुन तेरे अंदर एक अच्छा गुण है कि तुझमें दोष ढूँढने की प्रवृत्ति नहीं है इसीलिए मैं तुझे सर्वश्रेष्ठ विद्या जो की सर्वश्रेष्ठ रहस्य भी है वह बताता हूँ जिसको जानने के बाद तू मुक्त हो जाएगा।
क्योंकि यह एक सर्वश्रेष्ठ विद्या और सर्वश्रेष्ठ रहस्य है इसीलिए यह किसी योग्य व्यक्ति को किसी योग्य व्यक्ति के द्वारा ही दी जा सकती है।

यानी इसको सीखने के लिए अर्जुन जैसा शिष्य और सिखाने के लिए श्री कृष्ण जैसा गुरु लगता है।

जो दूसरों में दोष ढूँढता रहता है वह जीवन में कुछ नहीं कर पाता क्योंकि वह हर चीज़ में दोष ही ढूँढता रह जाता है। इसीलिए सिखाया उसको जाता है जो सीखने के लायक हो और सीखने को तैयार हो।

जो व्यक्ति श्रद्धा नहीं रखता वह मुझ ब्रम्ह तक नहीं पहुँच पाता और वह अलग-अलग योनियों में भटकता रहता है।

अर्जुन जितनी भी चीज़ें है जो तू देखता है उन सब में मैं स्थित हूँ सभी जीवों में भी सभी प्राणियों में भी।

मैं ही सभी को जन्म देता हूँ, उनका पालन करता हूँ तथा उन्हें नष्ट भी कर देता हूँ और यह सब मैं बिना आसक्ति के करता हूँ।

रहस्य यह है कि ; ब्रह्मांड जो कुछ भी है वह मैं हूँ और जो कुछ भी हो रहा है वह सब मैं कर रहा हूँ।

ब्रह्मांड में प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से जो कुछ भी है वह सब मैं हूँ। ब्रह्मांड की कोई भी चीज़ मुझसे अलग नहीं है और इस संसार में जो कुछ भी होता है वह सब मेरी ही इच्छा से होता है उसे मैं ही करता हूँ।

व्यक्ति के पुण्य कर्म के अनुसार उसे निश्चित समय के लिए स्वर्ग मिलता है जिसे भोगकर वह पुनः मृत्युलोक में आ जाता है और उसका जन्म-मरण का चक्र दोबारा चालू हो जाता है।

जो लोग देवताओं की पूजा करते हैं वह सभी परोक्ष रूप से मेरी ही पूजा करते हैं किंतु उनकी पूजन विधि सही नहीं है।

जो लोग पूजा करते हैं वह सभी यह नहीं जानते कि जिन देवताओं की वह पूजा कर रहे हैं उन सभी का स्वामी मैं ही हूँ।
अज्ञानता की वजह से लोग अलग-अलग देवताओं की पूजा करते हैं मेरी पूजा नहीं करते इसीलिए उन्हें बार-बार स्वर्ग लोक में जाना पड़ता है और मृत्यु लोक में आना पड़ता है।

पूजा : मेरे प्रति श्रद्धा का भाव रखो।

श्री कृष्ण : साफ दिल से भक्तिपूर्वक अर्पित किए गए फल-फूल मैं स्वीकार कर लेता हूँ।

इस ब्रह्मांड में मौजूद सभी चीज़ें भगवान ने ही बनाई है इसीलिए हम तो उन्हें कुछ दे ही नहीं सकते क्योंकि वह सब उन्हीं का है किंतु यदि हम श्रद्धा भाव से कुछ भी अर्पित करते हैं तो भगवान उसे जरूर स्वीकार करते हैं।

यानी कि आप क्या अर्पित कर रहे हैं यह महत्वपूर्ण नहीं है अर्पित करते हुए आपकी भावना क्या थी यह महत्वपूर्ण है।

हे अर्जुन तू

जो कुछ भी करता है
जो कुछ भी खाता है
जो कुछ भी हवन में अर्पित करता है
जो भी दान करता है
जो भी तप करता है

यह सभी करते हुए तू सिर्फ़ यह भाव रख कि तू सबकुछ मुझे अर्पित कर रहा है।

ऐसा करने से तू अपने सभी कर्मों के शुभ और अशुभ फलों से मुक्त हो जाएगा। और जैसे ही तू इन सब से मुक्त हुआ तो तू मुझमें आकर समा जाएगा और तुझे मोक्ष प्राप्त हो जाएगा।

Chapter - 10
विभूति योग

(Time 01:13:50)

पूरी सृष्टि मैंने बनाई है और जिस शक्ति से यह सृष्टि चलती है वह शक्ति भी मेरी है।

हे केशव यह शक्ति क्या है ?

श्री कृष्ण : जिस भी चीज़ में तुम जो भी श्रेष्ठता देखते हो वह सब मेरी ही वजह से है और इसी श्रेष्ठता को " विभूति " कहा जाता है।

अर्जुन मेरी उत्पत्ति को ना तो देवता जानते हैं ना ही महर्षि। क्योंकि यह सब मेरे बाद / कारण पैदा हुए हैं। सम्पूर्ण जगत की उत्पत्ति का कारण मैं ही हूँ और मेरे ही कारण पूरी श्रृष्टि में चेष्टा है।

मैं ब्रह्म हूँ पर इस ब्रह्म को बड़े-बड़े महर्षि भी नहीं समझ पाए।

अर्जुन : हे केशव मैं समझ नहीं पा रहा हूँ आप मुझे सरल शब्दों में समझाइए

श्री कृष्ण : अर्जुन मेरे विस्तार का कोई अंत है ही नहीं फिर भी मैं तुम्हें अपनी कुछ विभूतियों के बारे में बताता हूँ

जितने भी प्राणी हैं उन सभी की मैं आत्मा हूँ उनका आदि, मध्य और अंत हूँ अर्थात ब्रह्मा, विष्णु और शंकर मैं ही हूँ। (यह बात सांकेतिक है)

आदि : उत्पन्न करने वाला (विष्णु)
मध्य : पालन पोषण करने वाला (ब्रह्मा)
अंत : नष्ट करने वाला (शंकर)

आदित्यों में मैं विष्णु हूँ
प्रकाश पुंजों में मैं सूर्य हूँ
मरूतों में मैं मरीचि नमक तेज हूँ
नक्षत्रों में मैं चंद्रमा हूँ
वेदों में सामवेद हूँ
देवताओं में इंद्र हूँ
इंद्रियों में मन हूँ
प्राणियों में चेतना हूँ
रुद्रो में शंकर हूँ
यक्षों और राक्षसों में धन का स्वामी कुबेर हूँ

वसुओं में अग्नि हूँ
पर्वत शिखरों में मैं सुमेर हूँ
पंडितों में बृहस्पति हूँ
सेनापतियों में कार्तिकेय हूँ
जलाशयों में समुद्र हूँ
महर्षियों में भृगु हूँ
वाणियों में ओम हूँ
यज्ञों में जपयज्ञ हूँ
अचल पदार्थों में हिमालय हूँ
वृक्षों में पीपल हूँ
देवर्षियों में नारद हूँ
गंधर्वों में चित्ररथ रहता हूँ
सिद्धजनों में कपिल मुनि हूँ
घोड़ों में उच्चैःश्रवा हूँ
हाथियों में ऐरावत हूँ
मनुष्यों में राजा हूँ
शस्त्रों में वज्र हूँ
गुरुओं में बृहस्पति हूँ
गायों में कामधेनु हूँ
संतान उत्पादकों में कामदेव हूँ
सर्पों में वासुकी हूँ

नागों में शेषनाग हूँ
जलचारों में वरुण हूँ
पितरों में अर्यमा हूँ
शासन करने वालों में यम हूँ
दैत्यों में प्रहलाद हूँ
गणना करने में समय हूँ
पशुओं में सिंह हूँ
पक्षियों में गरुड़ हूँ
पवित्र करने में वायु हूँ
शस्त्रधारियों में राम हूँ
मछलियों में मगरमच्छ हूँ
नदियों में गंगा हूँ
विद्याओं में आध्यात्मिक विद्या हूँ
समासों में द्वंद समास हूँ
संपूर्ण सृष्टि का आदि / मध्य / अंत सब मै ही हूँ
संहार करने वालों में मृत्यु हूँ
स्त्रियों में लक्ष्मी / वाणी / स्मृति / बुद्धि / धारणशक्ति और क्षमा मैं हूँ
स्तुतियों में बृहत्साम हूँ
वैदिक छंदों में गायत्री हूँ
मासों में मार्गशीर्ष (अगहन या मगसर) हूँ

ऋतुओं में वसंत हूँ
छल कपट करने वालों के लिए जुआँ हूँ
तेजस्वियों का तेज हूँ
जीतने वालों की विजय हूँ
निश्चय करने वालों का संकल्प हूँ
सत्गुण वालों का सात्विक भाव हूँ
वृष्णि वंशियों में स्वयं वासुदेव हूँ
पांडवों में अर्जुन हूँ
मुनियों में व्यास हूँ
कवियों में शुक्राचार्य हूँ
दमन करने वालों की दमन शक्ति हूँ
विजय की अभिलाषा रखने वालों की नीति हूँ
विद्याओं में मौन हूँ
और ज्ञानियों के लिए ज्ञान तत्व हूँ

सभी प्रकार के जड़-चेतन, प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष सभी की उत्पत्ति का कारण मैं ही हूँ

ऐसी कोई सी भी चीज़ है ही नहीं जिसका अस्तित्व मेरे बिना रह पाए। मेरी विभूतियों का कोई अंत है ही नहीं इसीलिए हे अर्जुन जहाँ तुझे विशेष प्रतिभा / ऐश्वर्य / शोभा / अलौकिक

शक्ति दिखाई दे उन सब में मैं ही मौजूद हूँ उनमें तू मुझको देख यही विभूति योग है।

Chapter - 11

विश्वरूपदर्शनयोग

(Time : 01:21:10)

इस अध्याय में भगवान कृष्ण ने अर्जुन को अपना विश्वरूप दिखाया है।

अर्जुन : हे केशव सभी चीज़ों की विशेषताएँ आपकी वजह से है इसीलिए मैं देखना चाहता हूँ कि आप दिखते कैसे हैं ?

(भगवान कृष्ण अर्जुन को दिव्यदृष्टि देकर अपना विश्व रूप दिखाते हैं।)

संजय धृतराष्ट्र से : हज़ारों सूरज मिलकर भी जितना तेज उत्पन्न नहीं कर सकते उतना तेज भगवान कृष्ण के विश्वरूप मे दिख रहा है।

भगवान् का यह रूप देखकर अर्जुन को समझ ही नहीं आता कि यह शुरू कहाँ से हो रहा है और इसका अंत कहाँ पर है वह कहता है कि हे केशव मेरी आँखें चौंधिया रही है और आपके इस रूप को देखकर मुझे धीरज और शांति प्राप्त होने के वजाय डर लग रहा है।

अर्जुन यह सोच रहा था कि अगर सारी विशेषताएँ भगवान की ही वजह से हैं तो भगवान बहुत सुंदर दिखते होंगे।

विश्व रूप दिखाने का मकसद ?

विश्व में सब कुछ सुंदर ही नहीं है कुछ चीज़ें भयानक भी हैं और जब तक किसी व्यक्ति को किसी चीज़ के सभी पहलू मालूम ना चल जाएँ तब तक वह सम्पूर्ण नहीं होता।

भगवान् का एक काम ब्रह्म जी के रूप में सृष्टि को बनाना है जो की सुंदर दिखने वाला काम है।
दूसरा काम विष्णु जी के रूप में सृष्टि का पालन पोषण करना है यह भी सुंदर कार्य ही है।
किंतु तीसरा काम सृष्टि का संहार करना भी है शंकर जी के रूप में जो कि कुछ भी करके सुंदर नहीं हो सकता।

किंतु भगवान के लिए उत्पन्न करना, पालन-पोषण करना और नष्ट करना तीनों ही अनिवार्य कार्य है इसीलिए शुभ और अशुभ कर्म का भगवान् के सामने कोई भी मायने नहीं होता। क्योंकि भगवान जो कुछ भी करते हैं वह सब आवश्यक / अनिवार्य होता है।

अर्जुन अगर तू यह सोच रहा है कि यह तेरे सगे संबंधी है और तू इन्हें मार रहा है तो इनको तो मैंने पहले से ही मार रखा है तू तो निमित्त मात्र है यानी कर तो मैं ही रहा हूँ तू तो कारण / जरिया बना हुआ है।

निमित्त : भगवान का उपकरण

हे अर्जुन ऐसा व्यक्ति जो यह मानकर कार्य करता है कि सब मैं ही करा रहा हूँ और दुनिया में मौजूद किसी भी पदार्थ के लिए ना तो आसक्ति रखता है और ना ही द्वेष रखता है वह मुझे प्राप्त कर लेता है।

Chapter - 12
भक्तियोग

(Time 01:26:40)

अगर आपने इस अध्याय का मर्म समझ लिया तो आप जिंदगी में कभी भी दु:खी नहीं होंगे।

अर्जुन : हे केशव आपकी पूजा किस तरह से की जाए ?
किस तरह के कर्म करे कि व्यक्ति आपको प्राप्त कर ले ?

श्री कृष्ण : जो व्यक्ति
इंद्रियों को अपने अधीन करके,
सभी लोगों की भलाई की इच्छा से,
अपने सभी कर्मों को मुझे समर्पित करते हुए,
एकमात्र मेरा ध्यान करते हुए,
मुझमें अपना मन और बुद्धि स्थिर करता है
मैं उसको प्राप्त हो जाता हूँ।

किंतु हे अर्जुन अगर तू मुझमें अपना मन और अपनी बुद्धि स्थिर नहीं कर पा रहा है तो तू “ अभ्यास ” कर।

किंतु यदि तू अभ्यास भी नहीं कर पा रहा है तो " जो भी कर्म कर रहा है वह मुझे समर्पित कर दे " और यदि तू यह भी नहीं कर पा रहा है तो " अपने कर्मों के सभी फल त्याग दे "

भक्तियोग : कर्म के फल को भगवान् को समर्पित कर देना
ज्ञानयोग : कर्म के फल को त्याग देना

जो व्यक्ति किसी भी व्यक्ति से द्वेष नहीं करता
जो सभी का भला चाहता है
जो दयालु है (मनुष्य और जानवर दोनों के प्रति)
जो अहंकार रहित है
जो सुख और दुःख को एक समान समझता है
जो क्षमावान है
जो स्थिर चित्त है
जो अपने मन को अपने वश में रखता है
जो दृढ़ निश्चायी है
जिसने अपने मन और बुद्धि को मुझमें स्थिर कर दिया है
ऐसा व्यक्ति मुझे प्रिय है।

जो किसी भी जीव को परेशान नहीं करता
जो किसी भी जीव से ख़ुद परेशान नहीं होता

जिसे किसी भी चीज़ से हर्ष, भय और उत्तेजना नहीं होती
जिसकी कोई चाह नहीं है
जिसके विचार एकदम पवित्र हैं
जो पक्षपात नहीं करता
जो दु:ख के अवसर पर भी दु:खी नहीं होता
जिसने कर्म का अभिमान त्याग दिया है
वह व्यक्ति मुझे प्रिय है

जो अपनी पसंदीदा वस्तु को पाकर प्रसन्न नहीं होता
जो किसी से ईर्ष्या या द्वेष नहीं करता
जो किसी पदार्थ के मिलने या ना मिलने पर हर्ष या शोक नहीं करता
जिसे किसी भी प्रकार की कोई भी लालसा नहीं है
जिसने शुभ और अशुभ दोनों प्रकार के कर्मों का फल त्याग दिया है
वह व्यक्ति मुझे प्रिय है

जो शत्रु और मित्र के लिए एक जैसा भाव रखता है
जिसके लिए मान और अपमान एक समान है
जो सर्दी और गर्मी में अर्थात् अवसाद और उत्तेजना में एक जैसा रहता है

जिसका अपनी वाणी पर नियंत्रण है
जिसे जो कुछ भी मिलता है वह उसी में संतुष्ट रहता है
जिसका किसी स्थान विशेष से कोई विशेष लगाव नहीं है

ऐसी स्थिर बुद्धि वाला व्यक्ति मुझे प्रिय है और इसी प्रकार के व्यक्ति मुझे प्राप्त भी कर पाते हैं।

Chapter - 13

क्षेत्र क्षेत्रज्ञ विभाग योग

(Time 01:31:10)

इस अध्याय में श्री कृष्ण ने वो 18 काम बताएँ हैं जिन्हें मोक्ष प्राप्ति की इच्छा रखने वाले व्यक्ति को करना चाहिए।

1) सम्मान से दूर रहना

सम्मान पाने की लालसा से कोई भी कार्य नहीं करना।

2) छल नहीं करना

3) अहिंसा का पालन करना

4) सभी के प्रति क्षमा भाव रखना

5) सादगी से रहना

किसी भी चीज़ का दिखावा बिल्कुल भी नहीं करना

6) गुरु की सेवा करना

7) तन और मन को शुद्ध रखना

8) मन को स्थिर रखना

9) आत्मसंयम से रहना

जिस चीज़ का जितना उपयोग करना चाहिए उतना ही करना ना कम ना ज़्यादा

10) इंद्रियों के विषयों से विरक्ति रखना

अर्थात् अपनी इंद्रियों का उतना ही उपयोग करना जितना की कर्तव्य है वह सारी चीज़ें जिनसे शरीर को सुख मिलता है उनके मोह में नहीं पड़ना।

11) अहंकार नहीं करना

12) जन्म-मृत्यु, बुढ़ापा, रोग और दुःख को कर्मों का दोष मानना

अर्थात् जो भी सुख या दुःख मिल रहा है उसे अपने ही कर्मों का फल मानना / मानकर चलना।
हर चीज़ के लिए मैं और मेरे कर्म ही जिम्मेदार हैं कोई दूसरा नहीं।

13) संतान और स्त्री में आसक्ति और ममता का ना रखना

अर्थात् उनके लिए आपका जो भी कर्तव्य हैं उनका पूर्णतः पालन करना किंतु इनसे बिल्कुल भी मोह नहीं रखना।

14) प्रिय और अप्रिय स्थितियों में अपने अंतःकरण का एक सा रखना

अगर इच्छा पूरी हो गई तो उसके लिए अत्यधिक खुश नहीं होना और यह मान लेना कि यह भी भगवान की इच्छा थी अगर इच्छा पूरी नहीं हुई तो भी उसके लिए दुःखी नहीं होना यही मान लेना कि यह भी भगवान की ही इच्छा थी।

15) ईश्वर के प्रति अनन्य भक्ति रखना

हे ईश्वर मैं जो कुछ भी करता हूँ वह आपकी ही इच्छा से करता हूँ इसीलिए उसका जो कुछ भी फल मिलता है वह भी मैं आपको ही समर्पित करता हूँ और उसके बदले में मैं कुछ भी नहीं चाहता हूँ।

16) एकांत को पसंद करना जनसमूह के प्रति अरुचि रखना

जितना ज़्यादा समय आप दूसरों को दोगे उतना ही कम समय आप खुद को दे पाओगे और जितना ही कम समय आप ख़ुद को दोगे उतना ही कम आप “ आत्म ” को जान पाओगे।

बिना आत्म (स्वयं) को जाने मोक्ष नहीं मिल सकता। इसीलिए ज़्यादा से ज़्यादा समय एकांत में व्यतीत करना चाहिए।

17) आत्मा परमात्मा में मग्न रहना

स्वयं को ईश्वर का निमित्त मात्र मानना।

भगवान ने मुझे ख़ास मकसद के लिए भेजा है और जैसे ही वह मकसद पूरा हो जाएगा मैं वापस बुला लिया जाऊँगा। इसके अलावा मेरा कोई भी महत्व या मूल्य नहीं है यही मानकर सारे कर्म करना।

18) स्वयं को समझने का अभ्यास करना

स्वयं में ध्यान लगाकर एकाग्रचित होकर यह विचार करिए कि भगवान ने आपको यह जीवन क्यों दिया है

इस चीज़ को समझिए फिर इसी के अनुसार कर्म करिए। तभी आप आत्मा परमात्मा के यथार्थ को समझ पाएँगे अन्यथा नहीं।

जो भी इन 18 चीज़ों को कर लेता है उसे मोक्ष प्राप्त हो जाता है।

Chapter - 14
गुणत्रय विभागयोग

(Time 01:36:20)

दुनिया के सभी इंसानो में तीन तरह की विशेषताएँ होती हैं। जिन्हें त्रिगुण कहा जाता है

1. **सतोगुण**
2. **रजोगुण**
3. **तमोगुण**

इन तीन गुणों की वजह से ही इंसान मोक्ष प्राप्त नहीं कर पाता। इन्हीं तीन गुणों को ही तीन " मूल प्रवृत्तियाँ " भी कहा गया है।

सतोगुण : प्रकाश देने वाला स्वास्थ्यवर्धक है

> **जब भी शरीर की सभी कर्मेंद्रियाँ और ज्ञानेंद्रियाँ विवेकपूर्ण ढंग से कार्य करने लग जाएँ तो समझ जाना सतोगुण की वृद्धि हो रही है।**

किंतु इसी गुण की वजह से इंसान के अंदर ज्ञान प्राप्त करने की लालसा बढ़ती है जिसके कारण वह आसक्ति में बँध

जाता है। आखिर ज्ञान की आसक्ति भी तो आसक्ति ही है इसीलिए इंसान मोक्ष प्राप्त नहीं कर पाता।

रजोगुण : यह गुण व्यक्ति को कर्मशील बनाता है। यानी कर्म करने की इच्छा बताता है।

> इस गुण से प्रेरित व्यक्ति लगातार कर्म करता है ताकि वह नई-नई प्रसिद्धियाँ और उपलब्धियाँ हासिल कर सके।

क्योंकि एक उपलब्धि मिलने के बाद व्यक्ति उससे और बड़ी उपलब्धि पाने के लिए लगातार कर्म करने लगता है इसी कारण वह कर्मफल से बँध जाता है।
यानी व्यक्ति के अंदर आसक्ति आ गई इसीलिए मोक्ष प्राप्त नहीं हो सकता।

तमोगुण : इसी गुण की वजह से इंसान के अंदर आलस्य आता है।

> आलस्य की वजह से अज्ञान आता है और जो अज्ञानी है उसे तो मोक्ष प्राप्त ही नहीं हो सकता।

यह तीनो गुण कम या ज्यादा मात्रा में सभी व्यक्तियों में मौजूद होते हैं मात्रा में भिन्नता की वजह से ही अलग-अलग लोगों की अलग-अलग मूल प्रवृत्तियाँ होती है।

जिस व्यक्ति में जो गुण प्रबल होता है वह बाँकी के दो गुणों को दबा देता है और अपने हिसाब से कर्म करवाता है।

सतोगुणी उत्तम गति को
रजोगुणी मध्यम गति को
तथा तमोगुण निम्न या अधोगति
को प्राप्त करते हैं।

जो व्यक्ति इन तीनों गुणों के प्रभाव को समझने लगता है वह इन तीनों गुणों को लाँघ जाता है। इसीलिए ऐसा व्यक्ति मोक्ष पा जाता है।

अर्जुन : हे केशव इन तीनों गुणों से मुक्त व्यक्ति के लक्षण क्या है ?

श्री कृष्ण : जो सुख-दु:ख में एक समान रहता है

जो मिट्टी/पत्थर/सोना को एक समान महत्व देता है
जो प्रियअप्रिय स्थितियों में एक समान रहता है
जो निंदा और स्तुति को एक समान मानता है
जिसके लिए मित्र और शत्रु एक जैसे हैं
जिसने कर्म फल की इच्छा त्याग दी है

ऐसा व्यक्ति इन तीनों गुणों से लिप्त होने पर भी निर्लिप्त ही रहता है ऐसा व्यक्ति " गुणातीत " कहलाता है।

जो गुन गुणातीत के हैं वही गुण

दूसरे अध्याय में " स्थितप्रज्ञ " व्यक्ति के बताए गए हैं।
यही गुण 5वें अध्याय में " संन्यासियों " के बताए गए हैं
यही गुण 12वें अध्याय में अपने " प्रियभक्त " के बताए हैं।

त्रिगुण तो सभी में होते हैं किंतु वह व्यक्ति जो निष्काम भावना से कर्म करता है वह इन तीनों गुणों से मुक्त होकर मोक्ष प्राप्त कर लेता है।

Chapter - 15
पुरुषोत्तम योग

(Time 01:41:40)

मनुष्य योनि को कर्मयोनि कहा जाता है क्योंकि केवल मनुष्य योनि को ही कर्म करने का अधिकार प्राप्त है। बांकी सभी योनियों को मनुष्य योनि में किए गए कर्मों का फल माना जाता है।

तीन प्रकार की योनियाँ होती हैं

1) उच्चयोनि : देवयोनि है, यह मनुष्य को तब मिलती है जब उसने अच्छे कर्म किए होते हैं।

2) मध्यमयोनि : मनुष्य योनि है, इसके अंदर मनुष्य केवल कर्म करता है। और वह जो कर्म करता है उसका फल मिलता है।

3) निम्नयोनि : इसमें निम्न कोटि के जीवों को जन्म मिलता है। अगर किसी इंसान ने अच्छे कर्म नहीं किए हैं तो उसे निम्नयोनि में जन्म मिलता है।

हे अर्जुन जीवन भर मनुष्य जिस प्रकार के कर्म करता है उसी प्रकार के संस्कार उसकी आत्मा पर अंकित हो जाते हैं

और अगले जन्म में आत्मा इन्हीं पूर्व संस्कारों के अनुसार कार्य करती है। इसीलिए कोई भी इंसान अपना मूल स्वभाव नहीं बदल सकता।

(अपने आसपास के लोगों का अवलोकन करो कि वह बचपन में कैसे कार्य करते थे ? कैसे कार्य करने में उनको आनंद आता था ? उनका स्वभाव कैसा था ? और अब कैसा है ?)

जैसे अगर किसी व्यक्ति को बुरे कर्म करने में मजा आता है तो चाहे वह बहुत अच्छी-अच्छी चीज़ें सीख कर जीवन भर अच्छा कर्म करने भी लग जाए तो भी उसका मूल स्वभाव नहीं बदलेगा। उसे बुरे कर्म करने में मजा ही आएगा।

श्री कृष्ण : जीवात्मा को माध्यम बनाकर कान, आँख, नाक, त्वचा, रसना और नासिका के द्वारा मैं ही सभी चीज़ों का उपभोग करता हूँ।

मैं ही सूरज को चमकता हूँ
मैं ही वर्षा बनकर बरसाता हूँ
मैं ही फसलों / अन्न को उगता हूँ

जो अन्न तुम खाते हो वह मैं ही खाता हूँ
और उसे मैं ही पचाता हूँ
प्राणियों के अंदर जीवात्मा के रूप में मैं ही स्थित हूँ
मेरी उपस्थित के कारण ही लोगों के अंदर स्मृति / ज्ञान होता है
मेरे ही कारण व्यक्तियों में तर्कशक्ति / विश्लेषण शक्ति होती है

इंसान का व्यक्तित्व चार चीज़ों से बनता है

1. **स्मृति**
2. **ज्ञान**
3. **तर्कशक्ति**
4. **विश्लेषण शक्ति**

यदि यह चारों चीज़ें निकल दी जाएँ तो इंसान शरीर मात्र रह जाता है।
जो शक्ति इंसान को इंसान बनाती है वह शक्ति मैं हूँ।

ब्रह्मांड में जो कुछ भी है वह सब मेरा है इसीलिए हे अर्जुन तू सबकुछ मुझे अर्पित करने के भाव से कर्म कर।

इतना सब जानने के बाद कुछ भी जानने के योग्य नहीं रह जाता अर्जुन।

Chapter - 16

देवासुरसम्पद विभाग योग

(Time 01:45:32)

दो तरह की सम्पत्तियाँ हम जानते हैं " चल संपत्ति " और " अचल संपत्ति " इनका इस्तेमाल कोई तभी तक कर सकता है जब तक वह जिंदा है।
किंतु मृत्यु के बाद भी मनुष्य के साथ दो संपत्तियाँ जाती हैं " दैवीय संपत्ति " और " आसुरी संपत्ति "।

दैवीय संपत्ति और आसुरी संपत्ति वाले व्यक्तियों के गुण ?

दैवीय संपत्ति से युक्त व्यक्ति के गुण :

निर्भयता,
अंतःकरण की शुद्धता,
ज्ञान प्राप्त करने के लिए एकाग्रता,
दानवीरता,
इंद्रियों का संयम,
यज्ञ की भावना,
अच्छे विचारों को पढ़ना और उनका मनन करना,
अच्छे कार्यों को करने के लिए कष्ट सहने को भी तैयार रहना,

कथनी और करनी में कोई भी भेद न रखना,
सत्य, अहिंसा,
क्रोध नहीं करना,
त्याग की भावना,
मानसिक शांति,
निंदा नहीं करने की प्रवृत्ति,
सभी प्राणियों के लिए दया भाव,
व्यवहार में कोमलता,
बुरे कार्य करने में संकोच का अनुभव करना,
चंचलता नहीं होना,
तेजस्विता, क्षमाशीलता, धीरता, पवित्रता,
द्वेष की भावना नहीं होना,
अहंकार की भावना नहीं होना

दैवीय संपत्ति मनुष्य को मुक्ति दिलाती है।

आसुरी संपत्ति से युक्त व्यक्ति के गुण :

क्या करना चाहिए क्या नहीं ? इसका ज्ञान ना होना,
ना ही पवित्रता होना,

ना ही अच्छा आचरण होना,
झूठ बोलना,
ईश्वर को ना मानना,
केवल इच्छाएँ पूरी करते रहना ही इस जीवन का उद्देश्य है ऐसी विचारधारा होना,
क्रूर, एहसान फरामोश,
ढोंगी, अभिमानी,
चाहे कितना भी क्यों न मिल जाए संतुष्ट न रहना,
असीम इच्छा होना,
भोग विलास को ही जीवन का सर्वोच्च लक्ष्य मानना,
दूसरे का हक छीनना,
संपत्ति हड़पने की प्रवृत्ति,
दिखावे के लिए यज्ञ और दान करना,
भगवान् / लोगों की निंदा करना

श्री कृष्ण : आसुरी संपत्ति वाले व्यक्तियों को मैं बार-बार निम्न योनियों में डालता हूँ।

काम / क्रोध / लोभ तीनों नर्क के द्वारा हैं। और आत्मा को नीचे की ओर ले जाते है।

काम : कामना या इच्छा

कामनाओं के पूरा होने से लोभ बढ़ता है और लोभी को मुक्ति और शांति कहाँ है।

जो व्यक्ति इन तीनों से मुक्त रहता है वह उत्तम गति प्राप्त करता है।

इंसान को ऐसा प्रयास करना चाहिए कि उसकी दैवीय संपत्ति लगातार बढ़ती रहे और आसुरी संपत्ति धीरे-धीरे करके घटती चली जाए।

हे अर्जुन, जरूरी नहीं कि तुममें सारे दैवीय गुण हो पर अगर ज़्यादातर है तो तुम्हें मुक्ति मिल जाएगी।

अगर तुम्हारे मन में कभी भी इस बात को लेकर भ्रम पैदा हो कि

क्या उचित है क्या अनुचित ?
क्या करने से दैवीय संपत्ति बढ़ती है ?
क्या करने से आसुरी संपत्ति बढ़ती है ?

तब तुम शास्त्रों की शरण लो और यदि तुम शास्त्र के अनुसार कर्म करते हो तो तुम्हें निश्चित ही मोक्ष मिल जाएगा।

Chapter - 17
श्रद्धात्रय विभाग योग

(Time 01:52:20)

श्री कृष्ण : संशय की स्थिति में सदैव शास्त्रों को प्रमाण मानना चाहिए

अर्जुन : हे केशव जो व्यक्ति शास्त्र विधि को छोड़कर यज्ञ व पूजन करता है उसकी क्या गति होती है ?

श्री कृष्ण : मनुष्य में त्रिगुण होते हैं

1. **सतोगुण**
2. **रजोगुण**
3. **तमोगुण**

जिस प्रकार का व्यक्ति होता है उसकी उसी प्रकार की श्रद्धा भी होती है

1. **सतोगुणी की सतोगुणी श्रद्धा**
2. **रजोगुणी की रजोगुणी श्रद्धा**
3. **तमोगुणी की तमोगुणी श्रद्धा**

यज्ञ तीन प्रकार के होते हैं

1. **सात्विक यज्ञ :**

जो व्यक्ति यह मानकर यज्ञ करता है कि यह उसका कर्तव्य है और उसके फल की इच्छा नहीं करता है उसका यज्ञ सात्विक होता है।

2. **रजोगुणी यज्ञ :**

जो व्यक्ति फल की इच्छा से यज्ञ करता है ऐसा व्यक्ति, उसकी श्रद्धा और उसका यज्ञ रजोगुणी है।

3. **तमोगुणी यज्ञ :**

जो व्यक्ति जब यज्ञ करता है तो शास्त्र विधि का पालन नहीं करता, उससे सही प्रकार से दान-पुण्य नहीं किया जाता, तथा यज्ञ करते समय उसके मन में श्रद्धा नहीं होती ऐसा व्यक्ति, उसकी श्रद्धा और उसका यज्ञ तामसिक / तमोगुणी है।

तप कैसे करना चाहिए ? तप किस प्रकार का होता है ?

तप : शुद्धी करना

शुद्धी तीन स्तर पर होती है

1. मन
2. वचन
3. कर्म

मानसिक तप : मन में प्रसन्नता रखना,
शांति अनुभव करना,
मनन करना,
चिंतन करना,
संयमपूर्वक रहना,
और विचारों की पवित्रता रखना

ऐसा करने से मन का तप सिद्ध होता है।

वचन का तप :
ऐसी वाणी बोलना जो किसी को भी व्याकुल न करे,
सत्य बोलना किंतु ऐसा सत्य बोलना जो प्रिय हो परहितकारी हो,
अच्छे विचारों को कहना,

इस प्रकार की वाणी बोलना जिससे किसी को भी दुःख नहीं पहुँचे..

इसे वचनों का तप कहते हैं ऐसा करने से वचन का तप सिद्ध होता है।

कर्मों का तप : सभी पूजनीय व्यक्तियों को जैसे
देवता, ब्राह्मण, गुरु और ज्ञानी जनों का पूजन करना,
पवित्रता पूर्वक कार्य करना,
कार्यों में सरलता रखना,
ब्रह्मचर्य और अहिंसा का पालन करना

यह सभी कर्मों के तप कहलाते हैं।

अगर यह तीनों तप श्रद्धापूर्वक बिना कर्मफल की इच्छा के किए जाते हैं तब इसे “ सात्विक तप ” कहा जाता है।
किंतु यदि फल की इच्छा से किए जाते हैं तो यह “ राजसिक तप ” कहलाते हैं।

और जब यह तीनो तप इसलिए किये जा रहे हैं ताकि किसी को नुकसान पहुँचाया जा सके तब यह “ तामसिक तप ” कहलाते हैं।

तीनों तपों में कार्य तो एक जैसा ही किया जा रहा है किंतु भावना कैसी है इस चीज़ का फर्क पड़ रहा है।

सात्विक तप : इसलिए किया जा रहा है क्योंकि यह हमारा कर्तव्य है।

राजसिक तप : इसलिए किया जा रहा है क्योंकि हमें किसी से काम निकलवाना है।

तामसिक तप : इसलिए किया जा रहा है ताकि हम किसी दूसरे को नुकसान पहुँचा सकें।

भगवान कहते हैं कि जिसकी जैसी श्रद्धा होती है उसको उसी प्रकार की गति मिलती है।

तीन प्रकार के दान

1. सात्विक दान : जो दान कर्तव्य भावना से किया जाता है

2. राजसिक दान : जो दान बदले में कुछ मिलने की इच्छा से (वर्तमान या भविष्य में) किया जाता है

3. तामसिक दान : जो दान देश और काल का विचार किए बिना कुपात्रों को दिया जाता है और दान देते समय देने वाले के दिल में तिरस्कार की भावना होती है

भगवान बताते हैं कि यज्ञ, तप और दान करते समय किस प्रकार की भावना रखी जाएगी तो वह सत् कार्य कहलाएगी और किस प्रकार की भावना नहीं रखी जाएगी तो वह असत् कार्य कहलाएगी।

उदाहरण... मुझे लायक बनाने में मेरे माता-पिता के अलावा समाज के कई व्यक्तियों ने मेरी सहायता करी है तो मेरा भी यह कर्तव्य है कि मैं समाज को कुछ लौटाऊँ ; सात्विक दान है।

माता-पिता ने सहायता करी है इसलिए सिर्फ उनके लिए करूँगा किंतु समाज के लिए कुछ भी नहीं करूँगा। क्योंकि

समाज ने जो कुछ भी किया उसके बदले मेरे माता-पिता ने पैसे दिए तो हैं ; राजसिक दान है।

दान असल में उसको दिया जाना चाहिए जिसको वाकई में जरूरत है। बासी रोटियाँ है मैं तो नहीं खाऊँगा तो इसे दान ही कर देता हूँ भिखारी खा लेगा ; तामसिक दान है।

यज्ञ, तप और दान हमेशा कर्तव्य की भावना से ही किया जाना चाहिए।

Chapter - 18

मोक्षसन्यास योग

(Time 02:00:25)

हे केशव त्याग और सन्यास में क्या अंतर है ?

कुछ लोगों के मत : किसी भी इच्छा की पूर्ति के लिए किए जाने वाले कर्मों का त्याग ही संन्यास है।

कुछ अन्य लोगों के मत : कर्मों के फलों का त्याग ही सन्यास है।

जो लोग कर्मत्याग की बात कह रहे हैं वह इसलिए कह रहे हैं कि कर्म चाहे अच्छा करो या बुरा उसका फल भोगने के लिए दोबारा तो जन्म लेना ही पड़ेगा। इसीलिए कर्म को ही त्याग दिया जाए।

चाहे कितना भी अच्छा कर्म क्यों न कर लो उससे कुछ ना कुछ बुरा जरूर होता है ठीक इसी प्रकार चाहे कितना भी बुरा कर्म क्यों ना हो उससे कुछ ना कुछ अच्छा जरूर होता है।
उदाहरण : खेती करना

इसीलिए कुछ लोगों ने यह मानना शुरू कर दिया कि अगर कर्म किया ही नहीं जाए तो ना तो पाप होगा ना ही पुण्य और उसकी वजह से दोबारा जन्म भी नहीं लेना पड़ेगा।

श्री कृष्ण : यज्ञ, दान और तप छोड़े जाने योग्य कर्म नहीं है इन्हें तो हर हाल में करना ही चाहिए। क्योंकि कर्म करने से ही पवित्रता प्राप्त होती है।

जब भी यज्ञ, दान और तप करो तब इसके फल की आसक्ति छोड़ दो तो वो सर्वश्रेष्ठ है।

तीन प्रकार के त्याग

1. सात्विक त्याग : इसमें व्यक्ति कर्मफल की इच्छा को त्याग देता है।

2. राजसिक त्याग : व्यक्ति इसलिए कर्म को त्याग देता है क्योंकि कर्म करने से या तो पुण्य होगा या पाप।

3. तामसिक त्याग : इसमें व्यक्ति कर्तव्य कर्मों का ही त्याग कर देता है।

हे अर्जुन जो कर्मफल को ही त्याग देता है उसे मोक्ष प्राप्त हो जाता है क्योंकि उसे उस कर्म का ना तो पुण्य चाहिए और ना ही पाप।

5 स्तंभ जिनके बिना कर्म की सिद्धि नहीं हो सकती

1. शरीर : जिससे कर्म किया जाता है

2. आत्मा : इसे कर्ता भी कहा जाता है

3. इंद्रियाँ : इन्हें करण भी कहा गया है

4. इंद्रियों की क्रियाएँ : इन्हें चेष्टा कहा गया है

5. भाग्य : इसे दैवीय कहा गया है

उदाहरण : लक्ष्य IAS बनना है

शरीर : तैयारी शरीर के दम पर ही होगी

आत्मा : आत्म मतलब “ स्वयं ” आप स्वयं चाह रहे हो तैयारी करना। आप कर्ता हो।

इंद्रियाँ : आप तैयारी अपनी इंद्रियों की सहायता से करोगे। आँख, कान, हाथ यह सब करण हो गए जिनसे आप पढ़ोगे, सुनोगे और लिखोगे।

इंद्रियों की क्रियाएँ : जब आप तैयारी करोगे तो आपका ध्यान भटकेगा। इंद्रियों की खुद की इच्छाएँ होती हैं जिन्हें चेष्टा कहा जाता है इसी वजह से ध्यान भटकता है।

भाग्य : आपने अपना लक्ष्य स्वयं बनाया, आप शरीर के इस्तेमाल से उस पर कार्य भी कर रहे हैं और खुद को इंद्रियों की चेष्टाओं से दूर भी रखा हो सकता है इतनी तैयारी करने के बाद भी आपका selection नहीं हो।

कोई भी कर्म तभी सिद्ध होता है जब उसके अंदर यह पाँचो चीज़े हो और अनुकूल हो।

इस पूरी प्रक्रिया के दौरान हो सकता है कि जो कुछ भी आप बनना चाहते हैं वो आपके भाग्य में हो पर बीच में ही आपने उसे छोड़ दिया हो या उस काम को करने की आपकी इच्छा ही खत्म हो गई हो।

श्री कृष्ण : हे अर्जुन कोई भी काम तू ख़ुद नहीं करता उसे मैं ही करवाता हूँ इसीलिए जो भी तेरा कर्तापन का अहंकार है उसको हटा दे।

जिसके मन से कर्ताभाव का अहंकार मिट जाता है उसकी बुद्धि कर्मफल में लिप्त नहीं होती, वह सब लोगों को मारकर भी हत्यारा नहीं होता और ना ही कर्म के कारण किसी बंधन में फँसता है।

भगवान सभी को जन्म देते हैं, उनका पालन पोषण करते हैं, और उन्हें खत्म भी करते हैं लेकिन ना तो इसका उन्हें पुण्य मिलता और ना ही पाप। भगवान पुण्य का फल नहीं लेते इसलिए वह पाप के भी भागीदार नहीं बनते।

श्री कृष्ण : अर्जुन कर्मबंधन से मुक्त होने का एकमात्र उपाय है कि तू स्वयं को भगवान का उपकरण मात्र मान।

जैसे : जल्लाद न्याय का एक उपकरण मात्र है ना तो उसे पुण्य लगता और ना ही पाप।

निम्न चीजें जो भगवान् कृष्ण ने अर्जुन को बताई हैं..

तीन तरह के ज्ञान

- **सात्विक ज्ञान : जो व्यक्ति सभी प्राणियों में मुझको देखता है उसका ज्ञान सात्विक है**

- **राजसिक ज्ञान : जो अलग-अलग प्राणियों में अलग-अलग जीवात्मा को देखता है उसका ज्ञान राजसिक है**

- **तामसिक ज्ञान : जो शरीर को ही सब कुछ मानता है आत्मा को नहीं उसका ज्ञान तामसिक है**

तीन प्रकार के कर्म

- **सात्विक कर्म : वह सभी कर्म जिसको करते समय व्यक्ति के अंदर किसी भी प्रकार के फल की इच्छा नहीं होती अर्थात् कर्मफल की इच्छा से मुक्त होकर किया गया कर्म**

- **राजसिक कर्म : जो कर्म के बदले मे फल की इच्छा से किया गया हो**

- तामसिक कर्म : उस तरह के कर्म जिसको करते समय कर्ता अपनी शक्ति का विचार नहीं करता, उसके परिणाम के विषय में नहीं सोचता कि इसका आस-पास के लोगों पर क्या प्रभाव पड़ेगा

तीन प्रकार के कर्ता

- सात्विक कर्ता : जो कर्तापन की आसक्ति और कर्तापन के अहंकार से मुक्त हैं जिनमें अपने कर्म के प्रति धैर्य और उत्साह तो है। किंतु सफल हो जाते हैं तो प्रसन्न नहीं होते और असफल हो जाते हैं तो दु:खी नहीं होते

- राजसिक कर्ता : जो भोग विलास के लिए कर्म करते हैं और इसलिए करते हैं कि इसके बदले में कुछ मिलेगा। जो काम की सफलता या असफलता पर प्रसन्न या दु:खी होते हैं

- तामसिक कर्ता : जिनके कार्य में एकाग्रता नहीं है, निष्ठा नहीं है, मेहनत नहीं है, जो दूसरे के काम में बाधा डालते हैं, जो आलसी हैं और काम को निराशा से करते हैं। तथा दूसरों को नुकसान पहुँचाने के इरादे से कर्म करते हैं

तीन प्रकार की बुद्धि

- सात्विक बुद्धि : ऐसी बुद्धि जो सही, गलत, उचित, अनुचित का निर्णय करती है। जो कर्तव्य और अकर्तव्य को भलीभाँति समझती है

- राजसिक बुद्धि : ऐसी बुद्धि जिसे धर्म-अधर्म, कर्तव्य और अकर्तव्य की वास्तविकता मालूम नहीं होती

- तामसिक बुद्धि : ऐसी बुद्धि जो अज्ञान के अंधकार से ढकी हुई है अधर्म को ही धर्म मानती है हर बात का उल्टा अर्थ निकलती हैं

तीन प्रकार की धीरता (धारण शक्ति)

- सात्विक धीरता : जो मन, प्राण और इंद्रियों को भटकने नहीं देती और ध्यान के द्वारा सभी चीज़ों को स्वयं में स्थिर करती है

- राजसिक धीरता : जिसके अंदर व्यक्ति धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष के फल से चिपका रहता है

- तामसिक धीरता : जिसके द्वारा व्यक्ति निद्रा, भय, शुभ, अशुभ, शोक, निराशा, दु:ख और उद्दंडता को नहीं छोड़ता है

तीन प्रकार के सुख

- सात्विक सुख : जिस प्रकार के ध्यान से मनुष्य जिस असीम सुख में डूब जाता है जिससे सभी प्रकार के दु:खों का नाश होता है, ऐसा सुख जो शुरुआत में विष जैसा लगता है किंतु उसके परिणाम बहुत ही सुखद और मीठे होते हैं

वह सुख जो आत्मतत्व को समझ लेने से प्राप्त होता है

- राजसिक सुख : जो इंद्रियों और विषयों का भोग करने से मिलता है जो शुरुआत में अमृत के समान लगता है किंतु बाद में उसके परिणाम विष जैसे होते हैं

- तामसिक सुख : जो शुरुआत से लेकर अंत तक मनुष्य को भ्रम में डाले रखता है

यह सुख निद्रा, आलस्य और नशे के कारण प्राप्त होता है इसमें शुरू से लेकर अंत तक दु:ख ही दु:ख प्राप्त होता है किंतु तामसिक बुद्धि वाला व्यक्ति इसे समझ नहीं पाता है।

स्वभाव, धर्म और वर्ण

चारों वर्णों (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य शूद्र) के कर्मों का विभाजन उनके गुण के अनुसार तय किया गया है यह चारों समाज के महत्वपूर्ण अंग है अगर इनमें से एक भी अंग हट जाए तो पूरा समाज धराशाई हो जायेगा।

तप, संयम और ज्ञानार्जन करके अन्य वर्णों को शिक्षा प्रदान करना " ब्राह्मण " के द्वारा की गई पूजा है जिसे मैं स्वीकार करता हूँ।
धर्मयुद्ध " क्षत्रियों " द्वारा की जाने वाली पूजा है जिसे मैं स्वीकार करता हूँ।
व्यापार करना और व्यापार में पूरी ईमानदारी बरतना " वैश्यों " द्वारा की पूजा है जिसे मैं स्वीकार करता हूँ।
" शूद्र " का पूजन उसके सेवाभाव में निहित है जिसे मैं स्वीकार करता हूँ।

किंतु यदि ब्राह्मण अपने कर्तव्य का पालन न करके सत्ताधारियों को सही ज्ञान देने के वजाए उनकी चापलूसी करने लगे तो वह पाप का भागीदार होता है।
क्षत्रिय अपने बल से रक्षा करने की वजाए लोगों को दबाए तो वह पाप का भागीदार होता है।
वैश्य अगर अपने व्यापार में पूरी ईमानदारी ना रखे तो वह पाप का भागीदार है।
शूद्र अपने कार्यों से विमुख हो जाए तो वह पाप का भागीदार है।

अगर चारों वर्ण अपना कार्य सही से नहीं करते तो समाज की व्यवस्था भंग हो जाती है।

चारों वर्णों के व्यक्तियों का जो भी स्वाभाविक कर्म है वही उनका धर्म भी है और परमसिद्धि (मोक्ष) प्राप्त करने के लिए उन्हें अपना कार्य पूरी निष्ठा और ईमानदारी से करना चाहिए।

जब भी वह अपने कर्तव्य का पालन करें तो उसके फल की आसक्ति को त्याग दें और केवल कर्तव्य भावना से करें। ऐसा करने से उन्हें निश्चित ही मोक्ष की प्राप्ति हो जाएगी।

इसीलिए हे अर्जुन समस्त कर्मों को मुझको समर्पित कर और मुझमें एकाग्र हो जा।
यदि मोह की वजह से तू अपने कर्तव्य कर्म का पालन नहीं करता तो तुझे अभी तो शांति मिल जाएगी किंतु तेरा जो धर्म / मूलस्वभाव है जोकि युद्ध करना है अगर नहीं करेगा तो तू बाद में जरूर पछताएगा।

हे अर्जुन यह दुनिया का सबसे उच्चतम और गोपनीय ज्ञान मैंने तुझे दे दिया है इस पर तू गहराई से विचार कर और अपनी बुद्धि और विवेक का इस्तेमाल कर और जो भी उचित लगे वह कर।

(इसके बाद अर्जुन युद्ध करने के लिए अपनी कमर कस लेता है)

हे पार्थ जिस व्यक्ति में
तप करने की क्षमता नहीं है,
भक्ति भाव नहीं है,
ज्ञान सुनने की इच्छा नहीं है,
मुझ में भक्ति भाव नहीं रखता,

पात्रता नहीं है
उसे यह उच्चतम ज्ञान / रहस्य कभी भी मत देना / बताना।

श्री कृष्ण : जो भी इस गीता ज्ञान को फैलाएगा वह हमेशा मेरा प्रिय रहेगा।
जो भी मेरे इस धर्म संवाद का अध्ययन और मनन करेगा वह सभी प्रकार के कर्मों के फलों से मुक्त हो जाएगा और मुझमें आकर समा जाएगा।

संजय धृतराष्ट्र से : जहाँ पर योगेश्वर श्री कृष्ण है जहाँ धनुर्धारी अर्जुन है वही लक्ष्मी है, वही विजय है, वहीं वैभव है और वहीं नीति है।

श्रीमद्भगवद्गीता

पुनीत बिसारिया